हिन्दी साहित्य के इतिहास के प्रथम काल का नामकरण विद्वानों ने इस प्रकार किया है-

1. डॉ॰ ग्रियर्सन - चारणकाल,
2. मिश्रबंधु - आरम्भिक काल
3. आचार्य रामचंद्र शुक्ल- वीरगाथा काल,
4. राहुल संकृत्यायन - सिद्ध सामंत युग,
5. महावीर प्रसाद द्विवेदी - बीजवपन काल,
6. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र - वीरकाल,
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी - आदिकाल,
8. रामकुमार वर्मा - चारण काल या संधि काल।

## आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मत

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इस काल का नाम वीरगाथा काल रखा है। इस नामकरण का आधार स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं- ...आदिकाल की इस दीर्घ परंपरा के बीच प्रथम डेढ़-सौ वर्ष के भीतर तो रचना की किसी विशेष प्रवृत्ति का निश्चय नहीं होता-धर्म, नीति, श्रृंगार, वीर सब प्रकार की रचनाएँ दोहों में मिलती है। इस अनिर्दिष्ट लोक प्रवृत्ति के उपरांत जब से मुसलमानों की चढाइयों का आरंभ होता है तब से हम हिंदी साहित्य की प्रवृत्ति एक विशेष रूप में बंधती हुई पाते हैं। राजाश्रित कवि अपने आश्रयदाता राजाओं के पराक्रमपूर्ण चरितों या गाथाओं का वर्णन करते थे। यही प्रबंध परंपरा रासो के नाम से पायी जाती है, जिसे लक्ष्य करके इस काल को हमने वीरगाथा काल कहा है। इसके संदर्भ में वे तीन कारण बताते हैं-

1.इस काल की प्रधान प्रवृत्ति वीरता की थी अर्थात् इस काल में वीरगाथात्मक ग्रंथों की प्रधानता रही है।
2.अन्य जो ग्रंथ प्राप्त होते हैं वे जैन धर्म से संबंध रखते हैं, इसलिए नाम मात्र हैं और
3. इस काल के फुटकर दोहे प्राप्त होते हैं, जो साहित्यिक हैं तथा विभिन्न विषयों से संबंधित हैं, किन्तु उसके आधार पर भी इस काल की कोई विशेष प्रवृत्ति निर्धारित नहीं होती है। शुक्ल जी वे इस काल की बारह रचनाओं का उल्लेख किया है-
1. विजयपाल रासो (नल्लसिंह कृत-सं.1355),
2. हम्मीर रासो (शांगधर कृत-सं.1357),
3. कीर्तिलता (विद्यापति-सं.1460),
4. कीर्तिपताका (विद्यापति-सं.1460),

5. खुमाण रासो (दलपतिविजय-सं.1180),
6. बीसलदेव रासो (नरपति नाल्ह-सं.1212),
7. पृथ्वीराज रासो (चंद बरदाई-सं.1225-1249),
8. जयचंद्र प्रकाश (भट्ट केदार-सं. 1225),
9. जयमयंक जस चंद्रिका (मधुकर कवि-सं.1240),
10. परमाल रासो (जगनिक कवि-सं.1230),
11. खुसरो की पहेलियाँ (अमीर खुसरो-सं.1350),
12. विद्यापति की पदावली (विद्यापति-सं.1460)

शुक्ल जी द्वारा किये गये वीरगाथाकाल नामकरण के संबंध में कई विद्वानों ने अपना विरोध व्यक्त किया है। इनमें श्री मोतीलाल मैनारिया, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी आदि मुख्य हैं। आचार्य द्विवेदी का कहना है कि वीरगाथा काल की महत्वपूर्ण रचना पृथ्वीराज रासो की रचना उस काल में नहीं हुई थी और यह एक अर्ध-प्रामाणिक रचना है। यही नहीं शुक्ल ने जिन गंथों के आधार पर इस काल का नामकरण किया है, उनमें से कई रचनाओं का वीरता से कोई संबंध नहीं है। बीसलदेव रासो गीति रचना है। जयचंद्र प्रकाश तथा जयमयंक जस चंद्रिका -इन दोनों का वीरता से कोई संबंध नहीं है। ये ग्रंथ केवल सूचना मात्र हैं। अमीर खुसरो की पहेलियों का भी वीरत्व से कोई संबंध नहीं है। विजयपाल रासो का समय मिश्रबंधुओं ने सं.1355 माना है अतः इसका भी वीरता से कोई संबंध नहीं है। परमाल रासो पृथ्वीराज रासो की तरह अर्ध प्रामाणिक रचना है तथा इस ग्रंथ का मूल रूप प्राप्य नहीं है। कीर्तिलता और कीर्तिपताका- इन दोनों ग्रंथों की रचना विद्यापति ने अपने आश्रयदाता राजा कीर्तिसिंह की कीर्ति के गुणगान के लिए लिखे थे। उनका वीररस से कोई संबंध नहीं है। विद्यापति की पदावली का विषय राधा तथा अन्य गोपियों से कृष्ण की प्रेम-लीला है। इस प्रकार शुक्ल जी ने जिन आधार पर इस काल का नामकरण वीरगाथा काल किया है, वह योग्य नहीं है।

## डॉ॰ ग्रियर्सन का मत

डॉ॰ ग्रियर्सन ने हिंदी साहित्य के इतिहास के प्रथम काल को चारणकाल नाम दिया है। पर इस नाम के पक्ष में वे कोई ठोस तर्क नहीं दे पाये हैं। उन्होंने हिंदी साहित्य के इतिहास का प्रारंभ 643 ई. से मानी है किन्तु उस समय की किसी चारण रचना या प्रवृत्ति का उल्लेख उन्होंने नहीं किया है। वस्तुतः इस प्रकार की रचनाएँ 1000 ई.स. तक मिलती ही नहीं हैं। इस लिए डॉ॰ग्रियर्सन द्वारा दिया गया नाम योग्य नहीं है।

## मिश्रबंधुओं का मत

मिश्रबंधुओं ने ई.स. 643 से 1387 तक के काल को प्रारंभिक काल कहा है। यह एक सामान्य नाम है और इसमें किसी प्रवृत्ति को आधार नहीं बनाया गया है। यह नाम भी विद्वानों को स्वीकार्य नहीं है।

## डॉ. रामकुमार वर्मा का मत

डॉ.रामकुमार वर्मा-डॉ वर्मा ने आदिकाल को दो खण्डों में विभाजित कर दिया है-सन्धिकाल और चारणकाल संधिकाल भाषा की और संकेत करता है और चारणकाल एक वर्ग विशेष का बी होता है] इन्होंने हिंदी साहित्य के प्रारंभिक काल को चारणकाल नाम दिया है। इस नामकरण के बारे में उनका कहना है कि इस काल के सभी कवि चारण थे, इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता। क्योंकि सभी कवि राजाओं के दरबार-आश्रय में रहनेवाले, उनके यशोगान करनेवाले थे। उनके द्वारा रचा गया साहित्य चारणी कहलाता है। किन्तु विद्वानों का मानना है कि जिन रचनाओं का उल्लेख वर्मा जी ने किया है उनमें अनेक रचनाएँ संदिग्ध हैं। कुछ तो आधुनिक काल की भी हैं। इस कारण डॉ.वर्मा द्वारा दिया गया चारणकाल नाम विद्वानों को मान्य नहीं है।

## राहुल संकृत्यायन का मत

राहुल संकृत्यायन- उन्होंने 8वीं से 13 वीं शताब्दी तक के काल को सिद्ध-सांमत युग की रचनाएँ माना है। उनके मतानुसार उस समय के काव्य में दो प्रवृत्तियों की प्रमुखता मिलती है- 1.सिद्धों की वाणी- इसके अंतर्गत बौद्ध तथा नाथ-सिद्धों की तथा जैनमुनियों की उपदेशमुलक तथा हठयोग की क्रिया का विस्तार से प्रचार करनेवाली रहस्यमूलक रचनाएँ आती हैं। 2.सामंतों की स्तृति- इसके अंतर्गत चारण कवियों के चरित काव्य (रासो ग्रंथ) आते हैं, जिनमें कवियों ने अपने आश्रय दाता राजा एवं सामंतों की स्तृति के लिए युद्ध, विवाह आदि के प्रसंगों का बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया है। इन ग्रंथों में वीरत्व का नवीन स्वर मुखरित हुआ है। राहुल जी का यह मत भी विद्वानों द्वारा मान्य नहीं है। क्योंकि इस नामकरण से लौकिक रस का उल्लेख करनेवाली किसी विशेष रचना का प्रमाण नहीं मिलता। नाथपंथी तथा हठयोगी कवियों तथा खुसरो आदि की काव्य-प्रवृत्तियों का इस नाम में समावेश नहीं होता है।hu

## आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का मत

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी- उन्होंने हिंदी साहित्य के प्रथम काल का नाम बीज-बपन काल रखा। उनका यह नाम योग्य नहीं है क्योंकि साहित्यिक प्रवृत्तियों की दृष्टि से यह काल आदिकाल नहीं है। यह काल तो पूर्ववर्ती परिनिष्ठित अपभ्रंश की साहित्यिक प्रवृत्तियों का विकास है।

## आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मत

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी- इन्होंने हिंदी साहित्य के इतिहास के प्रारंभिक काल को आदिकाल नाम दिया है। विद्वान भी इस नाम को अधिक उपयुक्त मानते हैं। इस संदर्भ में उन्होंने लिखा है- वस्तुतः हिंदी का आदि काल शब्द एक प्रकार की भ्रामक धारणा की सृष्टि करता है और श्रोता के चित्त में यह भाव पैदा करता है कि यह काल कोई आदिम, मनोभावापन्न, परंपराविनिर्मुक्त, काव्य-रूढ़ियों से अछूते साहित्य का काल है। यह ठीक वहीं है। यह काल बहुत अधिक परंपरा-प्रेमी, रूढ़िग्रस्त, सजग और सचेत कवियों का काल है। आदिकाल नाम ही अधिक योग्य है क्योंकि साहित्य की दृष्टि से यह काल अपभ्रंश काल का विकास ही है, पर भाषा की दृष्टि से यह परिनिष्ठित अपभ्रंश से आगे बढ़ी हुई भाषा की सूचना देता है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने हिंदी साहित्य के आदिकाल के लक्षण-निरूपण के लिए निम्नलिखित पुस्तकें आधारभूत बतायी हैं-

> 1.पृथ्वीराज रासो, 2.परमाल रासो, 3. विद्यापति की पदावली, 4.कीर्तिलता, 5.कीर्तिपताका, 6.संदेशरासक (अब्दुल रेहमान), 7.पउमचरिउ (स्वयंभू कृत रामायण), 8.भविषयत्कहा (धनपाल), 9.परमात्म-प्रकाश (जोइन्दु), 10.बौद्ध गान और दोहा (संपादक पं.हरप्रसाद शास्त्री), 11.स्वयंभू छंद और 12.प्राकृत पैंगलम्।

## नाम निर्णय

> इस प्रकार हिंदी साहित्य के इतिहास के प्रथम काल के नामकरण के रूप में आदिकाल नाम ही योग्य व सार्थक है, क्योंकि इस नाम से उस व्यापक पुष्ठभूमि का बोध होता है, जिस पर परवर्ती साहित्य खड़ा है। भाषा की दृष्टि से इस काल के साहित्य में हिंदी के प्रारंभिक रूप का पता चलता है तो भाव की दृष्टि से भक्तिकाल से लेकर आधुनिक काल तक की सभी प्रमुख प्रवृत्तियों के आदिम बीज इसमें खोजे जा सकते हैं। इस काल की रचना-शैलियों के मुख्य रूप इसके बाद के कालों में मिलते हैं। आदिकाल की आध्यात्मिक,

श्रृंगारिक तथा वीरता की प्रवृत्तियों का ही विकसित रूप परवर्ती साहित्य में मिलता है। इस कारण आदिकाल नाम ही अधिक उपयुक्त तथा व्यापक नाम है।

## हिंदी साहित्य का इतिहास (आदिकाल और मध्यकाल)/आदिकाल की परिस्थितियाँ

# राजनीतिक परिस्थितियां

- वर्धन साम्राज्य को भारत का अंतिम साम्राज्य माना जाता है
- हर्षवर्धन की मृत्यु के बाद साम्राज्य लड़खड़ा गया
- कासिम ने भारत पर सरल आक्रमण किया यह अरबों का प्रथम आक्रमण 712 ईस्वी में हुआ
- भारत में अरबों का आक्रमण का मुख्य उद्देश्य 'धन लूटने' व इस्लाम धर्म का प्रचार प्रसार करना था

**मोहम्मद गजनी :-**

- 10 वीं शताब्दी में गजनी का राज्य जब मोहम्मद गजनी के हाथ में आया तो उसने भारत पर सफल आक्रमण 1001 ईसवी में किया
- मोहम्मद गजनी ने भारत पर लगभग 17 बार आक्रमण किया
- मोहम्मद गजनी ने 1008 ईस्वी में मूर्तिवाद के विरुद्ध नगरकोट में आक्रमण किया
- मोहम्मद गजनी ने मथुरा, कन्नौज, ग्वालियर, सौराष्ट्र बनारस आदि मंदिरों को भी लूटा
- उसका सबसे चर्चित आक्रमण 1024 ईसवी में सौराष्ट्र 'सोमनाथ मंदिर' पर हुआ और नगरों को भी नष्ट कर दिया
- 11वीं और 12वीं शताब्दी में राजाओं में एकता का अभाव था अंतः गजनी ने तुर्को को समाप्त कर मोहम्मद गोरी ने भारत पर आक्रमण किया

**मोहम्मद गोरी :-**

- मोहम्मद गोरी एक कट्टर मुसलमान शासक था

- उसने भारत पर प्रथम आक्रमण 1175 ईस्वी में किया
- दूसरा आक्रमण 1178 ई॰ में गुजरात पर किया यहां का शासक भी बुरी तरह पराजित हुआ
- 1192 मैं पृथ्वीराज को भी पराजित किया और मुसलमानों का राज स्थापित किया
- इसका कारण था कि राजपूत में परस्पर फूट व पड़ोसी राज्यों के प्रति ईर्ष्या द्वेष पैदा हो गया था
- इस प्रकार संपूर्ण भारत में हिंदुओं की सत्ता समाप्त हो गई और मुसलमानों का राज्य स्थापित हो गया
- ईशा की आठवीं शताब्दी से 15वीं शताब्दी तक राजनीतिक दृष्टि से हिंदुओं की राज्यसत्ता 'शनै-शनै समाप्त हो गई' और इस्लाम सत्ता का धीरे-धीरे उदय हो गया
- विदेशियों का आक्रमण पश्चिमी उत्तर मध्य भारत पर हुआ जिसका प्रभाव यहां के साहित्य में उसका वर्णन किया जैसे हम्मीर रासो, विजयपाल रासो, विजयपाल रासो, पृथ्वीराज रासो, परमाल रासो, आदि ग्रंथ इसके प्रमाण हैं
- यह युद्ध, अशांति एवं संघर्ष का काल था
- जनता विदेशी आक्रमणकारियों के साथ-साथ देसी राजाओं के अत्याचारों से भी त्रस्त थी
- संपूर्ण भारत खंडों में बांटा हुआ था इसलिए राज्यों में संकुचित राष्ट्रीयता नहीं थी
- राजनीतिक दृष्टि से यह युग भारतीय इतिहास में पतन और विघटन का युग है । सम्राट हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात देश में एकछत्र शासन का अभाव हो गया था। राष्ट्र छोटे-छोटे राज्यों में बँट गया । राजसत्ता अस्थिर हो गई । इन राज्यों के शासक आपस में मिथ्या शान और अभिमान में पड़कर लड़ने लगे । लड़ाइयों का प्रमुख उद्देश्य जर, जोरु और जमीन के लिए शौर्य-प्रदर्शन ही होता था । यह साधारण सा नियम बन गया था -
    - **जाकी बिटिया सुंदर देखी, ता ऊपर जाइ धरि तरवारी** ।
- कवि जगनिक ने निम्न पंक्तियों में क्षत्रिय के गुण गिना दिए -
    - **बारह बरिस लौ कूकर जीवै, और तेरह लौ जियै सियार।**
      **बरिस अठारह छत्री जीवै, आगे जीवन को धिक्कार ।।**
- तात्पर्य यह है कि किसी न किसी बहाने राजाओं की तलवार म्यान से बाहर रहती थी ।

दूसरी ओर आपस की फूट में फँसे हुए हिंदू राजाओ पर पश्चिम की ओर से मुसलमानों ने

भी आक्रमण करने आरंभ कर दिए थे । इस प्रकार यह युग आंतरिक अशांति एवं बाह्य आक्रमण से त्रस्त युग था ।

धार्मिक दृष्टि से इस युग में बौद्ध धर्म का ह्रतास होने लगा था, शंकाराचार्य और कुमारिल भट्ट जैसे विद्वानों ने उनकी कमर तोड़ दी थी । ब्राहम्ण धर्म फिर से पनपने लगा था ।

सामाजिक दृष्टि से इस युग में राजा का महत्व सर्वोपरि था । उसकी इच्छा पर सम्पूर्ण राज्य निर्भर था । साधारण जनता का कोई महत्व नहीं था । इस दृष्टि से इसे सामंतवादी युग कहा जा सकता है ।

# धार्मिक परिस्थिति

- ईशा की सातवीं शताब्दी से पूर्व देश का धार्मिक वातावरण शांत और श्रद्धापूर्ण था
- छठी शताब्दी में भक्ति आंदोलन तमिल क्षेत्र से उदय होकर कर्नाटक और महाराष्ट्र में फैल गया
- एक ओर बौद्ध धर्म का पतन हो गया था तो दूसरी ओर अलवार और नयनार संतो का उदय हो गया था
- अलवार संत 12, और नयनार 63 संत ने भक्ति का विकास किया और दक्षिण भारत से उत्तर भारत में भक्ति को लेकर आए
- भक्ति आंदोलन को दक्षिण भारत से उत्तर भारत में लाने का श्रेय रामानंद को जाता है
- उत्तर भारत में भक्ति आंदोलन 13वीं शताब्दी में आया और रामानंद के निम्नलिखित शिष्य द्वारा (कवीर, रैदास, पीपा, सेना आदि) शिष्य द्वारा इसको आगे बढ़ाया गया
- रामानंद के विषय में एक पंक्ति बहुत प्रचलित है **भक्ति उपजी द्रावड़ि लाए रामानंद**
- एक और जैन धर्म और शैव धर्म आपस में टकराव की स्थिति में थे दोनों में प्रतिस्पर्धा का दौर चल रहा था
- राजपूत अहिंसा में विश्वास नहीं करते थे अंतः शैव धर्म को माना और जैन धर्म का हास्य हुआ , राजपूतों के कारण ब्राहमणों का खूब बोलबाला था

- अपनी शक्ति क्षीण होता देख बौद्ध धर्म रूप बदलकर सामने आया | बौद्ध धर्म महायान शाखा के रूप में आया जिसमें तंत्र मंत्र, जादू टोने, ध्यान धारण, आदि का महत्व था
- लोग इससे प्रभावित होकर जादू टोने के चक्कर में पड़ गए
- जनता को कोई सही रहा नहीं दिखा पा रहा था भ्रमित जनता को नई दिशा प्रदान करने के लिए शंकराचार्य और रामानुजाचार्य आदि सामने आए

# सामाजिक परिस्थिति

- जनता की स्थिति अत्यंत दयनीय थी
- जनता शासक और धर्म दोनों से स्वयं को निराश्रित पा रही थी वास्तविकता यह थी कि दोनों ही जनता को शोषण कर रहे थे
- समाज छोटी छोटी जातियों उप जातियों में विभाजित था | समाज में अनेक रूढ़ियां पनप रही थी | समाज में नारी की दशा अत्यंत सोचनीय अथवा दयनीय थी | वह मात्र भोग विलास की वस्तु रह गई थी उसका क्रय विक्रय किया जा रहा था|
- सामान्य जन वंचित था| निर्धनता बढ़ती जा रही थी | सती प्रथा का भयंकर अभिशाप था| राजपूतों में आत्मसम्मान का स्वाभिमान था|
- नारी के कारण युद्ध भी हुआ करते थे
- राजाओं में बहु-विवाह की प्रथा का प्रचलन था अर्थात वह एक से ज्यादा रानियों को रखा करते थे
- इस समय राजा को ही ईश्वर का रूप दे दिया गया था| राजा की ही पूजा की पूजा की जाती थी और राजा को ही सर्वश्रेष्ठ माना जाता था
- स्त्रियों को केवल भोग विलास की वस्तु समझा जाता था
- समाज में क्षत्रियों की प्रधानता थी

# सांस्कृतिक परिस्थिति

- हर्षवर्धन के समय तक भारतीय संस्कृति अपने चरमोत्कर्ष पर थी उस समय तक स्वाधीनता तथा देशभक्ति के भाव जनता के हृदय में रहते थे
- परंपारीक संगीत, मूर्ति, चित्र, स्थापत्य आदि कलाओ ने खूब प्रगति की
- उस समय मंदिरों का निर्माण भी भव्य रुप में हुआ जैसे सोमनाथ, पूरी, कांची, तंजौर, खजराहो आदि इन सभी मंदिरों का निर्माण उसी समय हुआ था
- प्राय सभी कलाओं में धार्मिक भावनाओं की छाप थी 'अलबरूनी' ने हिंदुओं के मंदिर शैली की बड़ी प्रशंसा की थी
- किंतु मुसलमानों ने इस कला पर कुठाराघात किया और मंदिरों को नष्ट करते गए
- यवनो के आक्रमण से भारतीय संस्कृति का विघटन होने लगा | हमारे त्यौहार, मेलो, खान-पान, वेशभूषा, विवाह आदि पर इस्लाम का गहरा प्रभाव पड़ा
- कला के क्षेत्र में भी भारतीय परंपरा लुप्त हो गई
- गायन, वादन, नृत्य आदि पर भी इस विदेशी संस्कृति का प्रभाव पड़ा
- हिंदू राजाओं ने भी विदेशी कलाओं को आश्रय प्रदान किया जिसके कारण धीरे-धीरे भारतीय संस्कृति लुप्त हो गई
- मुसलमान मूर्ति विरोधी थे अंतः मूर्तिकला का भी विकास समाप्त हो गया
- सम्राट हर्षवर्धन के समय भारत सांस्कृतिक दृष्टि से अपने शिखर पर थी

# साहित्यिक परिस्थिति

- इस काल में साहित्यिक परिस्थिति का विशेष महत्व था
- अशांत वातावरण में भी भारतीय साहित्य ने निरंतर विकास किया
- इस काल में ज्योतिषी दर्शन स्मृति आदि विषयों के अलावा हर्ष का नेषध चरित आदि कवियों की रचना हुई

- संस्कृत में भी खूब रचनाएं हुई संस्कृत के अलावा प्राकृत एवं अपभ्रंश में भी प्रचुर मात्रा में श्रेष्ठ साहित्य रचा गया

- जैन, सिद्धों का साहित्य इसका प्रमाण है

- देश भाषा में भी साहित्य की रचना हुई साहित्य जनता की भावनाओं को मानसिक स्थितियों में व्यक्त करने का माध्यम बन गया था

- संस्कृत के कवि रचनात्मक प्रतिभा के उद्घाटन के कवि धर्म प्रचार में लीन थे

- केवल हिंदी ही एक ऐसी भाषा है साहित्य के माध्यम से तत्कालीन परिस्थितियों को किसी रूप में उद्घाटित कर रही थी